आगम का अध्ययन क्यों ?

■शासनप्रभाविका मैनासुन्दरीजी म.सा.

आगम के अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व विषय पर आचार्यश्री हीराचन्द्र जी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. ने सामायिक-स्वाध्याय भवन में ३ से ५ अक्टूबर २००१ तक प्रवचन फरमाये थे। प्रवचनों को संकलित/व्यवस्थित कर लेख रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। —**सम्पादक**

आगम क्या है?

हमारे समक्ष एक प्रश्न उभर कर आता है कि आगम क्या है? उत्तर स्पष्ट नजर आता है कि तीर्थंकर भगवन्तों के हृदय में जगज्जीवों के प्रति अनन्त करुणा का स्रोत लहलहाता है। वे विश्व के जीवों के हित व कल्याण के लिए जो अमृतमय देशना फरमाते हैं, प्रवचन देते हैं, उसी प्रवचन को आगम कहते हैं। शास्त्रों में कहा है–

"अत्थं भासइ अरहा, सुत्तं गंथन्ति गणहरा निउणं।"

अर्थात् अर्थ रूप आगम के वचन तीर्थंकर फरमाते हैं और उसको सूत्ररूप में गणधर गूंथते हैं। उन्हीं के वचन आगम कहलाते हैं। अथवा तो रागद्वेष के विजेता महापुरुषों के वचन आगम कहलाते हैं। आप्तवाणी आगम है।

आगमों का अध्ययन क्यों किया जाता है?

आगमों का अध्ययन करने के पीछे हमारा बहुत बड़ा हेतु है। अनादिकाल से जीवन में रहे हुए काम, क्रोध, मोह, वासना एवं विकारों का आगम अध्ययन से जड़मूल से नाश होता है। जीवन में ज्ञान का महाप्रकाश प्रकट होता है। उत्तराध्ययन सूत्र के बत्तीसवें अध्ययन में श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने फरमाया—

"नाणस्स सव्वस्स पगासणाए अण्णाणमोहस्स विवज्जणाए।
रागस्स दोसस्स य संखएण, एगन्तसोक्खं समुवेइ मोक्खं।"

अर्थात् सम्पूर्ण ज्ञान के प्रकाशन से, अज्ञान और मोह के नाश से, राग और द्वेष के सर्वथा क्षय से जीव एकान्त सुख रूप मोक्ष को प्राप्त करता है।

वीतराग भगवन्तों की वाणी निर्दूषित होती है। उसमें वचनातिशय होता है। दशाश्रुतस्कंध सूत्र में आचार्यों की आठ संपदाओं का विचार चला है। उनमें एक वाचना संपदा है। उसमें बताया है कि आचार्य महाराज आदेय वचन वाले होते हैं। उनके वचन को कोई भी लांघ नहीं सकता। चतुर्विध संघ उसे शिरोधार्य करता है। जब आचार्य श्री आदेय वचन वाले होते हैं तब फिर तीर्थंकर भगवन्त का तो कहना ही क्या? तीर्थंकर भगवान के एक-एक वचन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपी फूल को चतुर्विध संघ मस्तक पर चढ़ाकर भव सागर से किनारा करते हैं। उनके निर्दोष एवं राग-द्वेष विवर्जित वचन जन-जन के लिए महाप्रभावक होते हैं।

आगमों को पढ़ने व पढ़ाने के पीछे बहुत बड़ा उपकार व शासन की प्रभावना निहित है। जैसा कि स्थानांग सूत्र के पांचवें स्थान में शास्त्र पढ़ाने एवं पढ़ने के पाँच-पाँच कारण बताए हैं।

तंजहा–"संगहट्ठयाए, उवग्गहणट्ठयाए, निज्जरणट्ठयाए, सुत्ते वा मे पज्जवयाए भविस्सइ, सुत्तस्स वा आवोच्छित्तिनयट्ठयाए।"

1. संगहट्ठयाए– आगम ज्ञान सिखाने के पीछे पांच कारणों में प्रथम कारण है– संग्रह के लिए गुरु शिष्य को आगम पढ़ाता है। मेरा शिष्य ज्ञान का भली भांति संग्रह कर सके। पढ़ाते समय गुरु के हृदय में यह पवित्र भावना रहती है कि मेरे शिष्य के पास अधिक से अधिक ज्ञान का खजाना सुरक्षित रहे। वह पढ़-लिखकर जीवादि नवतत्त्वों का जानकार बने, जड़-चेतन का भेद विज्ञाता बने और बहुत बड़े विद्वानों में अव्वल नम्बर आवे। मेरा पूरा-पूरा कर्त्तव्य है कि जब मैंने उसे दीक्षित किया है तो उसे मैं शिक्षित भी करूं और गुरु के मन में शिष्य को शास्त्राभ्यास कराते समय यह ख्याल भी आता है कि उसे आगम ज्ञान पढ़ते देखकर अन्य लोग भी आगमज्ञान के श्रवण के प्रति आकर्षित होकर सुनने के लिए बैठेंगे। उन लोगों को जो शास्त्र-श्रवण से प्रतिबोध होगा, उसका लाभ मुझे भी मिलेगा, क्योंकि मैं निमित्त बनूंगा। इस प्रकार के उद्देश्यों से ज्ञान पढ़ाया जाता है।

2. उवग्गहणट्ठयाए–जब शिष्य मेरे से वाचना लेंगे और मैं वाचना दूंगा, तब उन शास्त्र वाक्यों को सुन-सुनकर मेरे शिष्य तप और संयम में मजबूत बन जायेंगे, उनकी आध्यात्मिक साधना दृढ़ हो जायेगी। देवता भी उन्हें सत्पथ से हिला नहीं सकेंगे। मेरा शिष्य दूसरों को उपदेश देकर सत्पथ का राही बनाने में समर्थ हो जायेगा। इस प्रकार धर्मबोध देने से गण, गच्छ और सम्प्रदाय की महती महिमा होगी। संघ की मान-मर्यादा सुरक्षित रखवाने में मैं भी निमित्त बनूँगा। मैं भी यह मानूँगा कि मेरे द्वारा शास्त्र वाचना लेने वाले शिष्य ने जिनशासन की बहुत बड़ी सेवा की है और आगे भी करता रहेगा। ऐसा सोचकर गुरु शिष्य को शास्त्र वाचना देते हैं।

3. निज्जरणट्ठयाए– कर्म निर्जरा के उद्देश्य से गुरु शिष्य को वाचना देते हैं। श्रुत साहित्य के पढ़ने से कर्मों की महती निर्जरा होती है। बारह प्रकार के तपों में स्वाध्याय भी एक प्रकार का तप है। वाचना तप को स्वीकार करने वाला भी एक प्रकार का तप करता है। यह बात शास्त्र सम्मत है। सभी धर्मों ने स्वाध्याय को तप माना है। स्वाध्याय आभ्यन्तर तप है। जैसा कि शास्त्रकारों ने कहा–

"भवकोडिसंचियं कम्मं, तवसा निज्जरिज्जइ।।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् करोड़ों जन्मों के संचित पापकर्म तप के माध्यम से नष्ट किए जाते हैं, ऐसा सोचकर गुरु शिष्य को शास्त्र पढ़ाता है कि मेरा शिष्य भी इस प्रकार कर्मों की महान निर्जरा करेगा।

4. सुत्तेवा मे पज्जवया भविस्सइ– गुरु शिष्य को ज्ञान इस प्रयोजन से भी देता है कि इनको पढ़ाने से मेरा ज्ञान भी बढ़ेगा। प्रत्येक शिक्षाशास्त्री भी इस बात को स्वीकार करता है कि दूसरों को पढ़ाने से अपना ज्ञान मजबूत होता है। क्योंकि यह निश्चित मत है कि "विद्या" बांटने से और अधिक बढ़ती है, अधिक पुष्ट भी होती है।

5. सुत्तस्स वा अवोच्छित्तिणयट्ठयाए– शिष्य को पढ़ाने के पीछे गुरुजनों का यह प्रयोजन भी रहता है कि शास्त्र पढ़ाने की परिपाटी छिन्न-भिन्न न हो जाय। शास्त्र पढ़ने की शृंखला टूट न जाय। लम्बे समय तक शिष्यों में ज्ञान की अजस्र धारा निरन्तर प्रवाहित होती रहे और शिष्य समुदाय उस ज्ञानगंगा में डुबकियाँ लगाकर स्वयं को पावन करता रहे, इसी उद्देश्य से शिष्य को गुरु ज्ञान सिखाते हैं।

पढ़ाने की जिसमें योग्यता होगी, वही आगम ज्ञान पढ़ा सकता है। आगमज्ञान के ज्ञाता, विद्वान साधु-साध्वी भी होते हैं, तो श्रावक-श्राविका भी कहीं-कहीं एवं कभी-कभी ज्ञान के अच्छे ज्ञाता मिल सकते हैं। दोनों का पूरा पूरा कर्त्तव्य है कि वे संघहित को ध्यान में रखकर अल्पज्ञों को आगम ज्ञान पढ़ाकर शासन की सेवा करें। इससे श्रुत सेवा, स्वयं की सेवा एवं भगवान की सेवा-भक्ति होगी।

अब यह जानना भी बहुत जरूरी है कि शिष्य आगम क्यों पढ़ता है? उसके पढ़ने के पीछे क्या हेतु है? क्योंकि बिना प्रयोजन किसी कार्य में प्रवृत्ति नहीं होती। जब शास्त्रों के पन्ने उठाकर देखते हैं, तब पांच कारण नजर आते हैं:–

1. **नाणट्ठयाए**– स्वाध्याय करने से ज्ञान तो बढ़ता ही है, किन्तु अपनी उलझी हुई गुत्थियों को सुलझाने के लिए तथा आगमों का रहस्य जानने के लिए शिष्य शास्त्र पढ़ता है।
2. **दंसणट्ठयाए**– स्वाध्याय करने से मुझे ज्ञान के साथ-साथ अपना सम्यग्दर्शन मजबूत करने का सुअवसर मिलेगा। तत्त्वार्थ ज्ञान होने पर समकित शुद्ध रहेगी। वीतराग भगवन्तों की वाणी ही मेरा आत्म कल्याण करेगी। भले ही आगम की बहुत सी बातें मेरी समझ में आए अथवा न आए, फिर भी समझने की पूरी-पूरी कोशिश करूंगा। क्योंकि यह स्वाध्याय मेरे लिए महान कल्याणकर है।
3. **चरित्तट्ठयाए**– आगम के एक-एक पद, चरण एवं गाथा चारित्र धर्म को विशुद्ध करने वाली है। कहा भी है – "ज्ञानस्य फलं विरतिः"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् ज्ञान का फल त्याग है, विरति है। तत्त्वज्ञान से चारित्र निर्मल होता है। यह सब बातें आगम वाणी से ही जानी जाती हैं। अतः मुझे अवश्य ही स्वाध्याय करना चाहिए।

4. **वुग्गहविमोयणट्ठयाए**– जो व्यक्ति हठाग्रही है। मिथ्यानिवेश से विवाद पर अड़ा हुआ है। उसे परास्त करने के लिए तथा उसे कदाग्रह से हटाने के लिए श्रुत अध्ययन करना जरूरी है। आगम के बल पर ही उसे मिथ्यात्व से हटाकर सम्यग्दर्शन से जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार आगम ज्ञान साधक का महान् उपकार करता है।
5. **अहत्थे वा भावे जाणिस्सामि त्ति कट्टु**– पदार्थों के स्वरूप को जानने के लिए और द्रव्यों की गुण-पर्यायों को जानने के लिए आगमज्ञान अति आवश्यक है। ऐसा जान कर शिष्य गुरु से आगम ज्ञान पढ़ता है।

आगमज्ञान को पढ़ने से जीवन में अतिशय ज्ञान-दर्शन की प्राप्ति होती है। ज्ञानावरणीय कर्म के बंध के कारण हैं, उनसे हमें हमेशा दूर रहना चाहिए तथा उन बन्ध के कारणों को अमल में नहीं लाना चाहिए।

ज्ञान-प्राप्ति के विषय में स्थानांग सूत्र के चौथे स्थान में अच्छे ढंग से समझाया गया है:–

"चउहिं ठाणेहिं निग्गन्थाण वा निग्गन्थीण वा अतिसेसे णाणदसंणे समुपज्जिउकामे समुपज्जेज्जा तंजहा– 1. इत्थीकहं, भत्तकहं, देसकहं, रायकहं नो कहेत्ता भवति 2. विवेगेण विउसग्गेणं सम्ममप्पाणं भावेत्ता भवति 3. पुव्वरत्तावरत्त - कालसमयंसि धम्मजागरियं जागरिता भवति 4. फासुस्स एसणिज्जस्स उंछस्स सामुदाणियस्स सम्मं गवेसिया भवति इच्चेतेहिं चउहिं ठाणेहिं निग्गन्थाण वा निग्गन्थीण वा जाव समुपज्जेज्जा (स्थानांग4)

अर्थात् साधु-साध्वी को अतिशय ज्ञानदर्शन प्राप्त करने के लिए चार कार्य करने चाहिए–

१. सर्वप्रथम कारण है चार प्रकार की विकथाएं नहीं करे। क्योंकि विकथाएं इस जीवात्मा को आत्मधर्म से विरुद्ध ले जाने का कार्य करती हैं। अतः स्त्रीकथा, भक्तकथा, देश कथा और राजकथा से बचकर चले।

२. विवेक और व्युत्सर्ग के द्वारा निरन्तर आत्म-चिन्तन करता हुआ साधक अतिशय ज्ञान प्राप्त करता है। वस्त्र, पात्र, कंबल और शरीर से मोह ममत्व छोड़ता हुआ और कायोत्सर्ग करता हुआ अतिशय आगम ज्ञान प्राप्त करता है। विवेक के अभाव में छोटी सी गलती भी भयंकर विकराल रूप ले लेती है। जैसे बाहुबलि के हृदय में रहा हुआ अहं का विकार केवलज्ञान दिलाने में फौलादी दीवार बन गया। जिस दिन छोटे दीक्षित भाइयों को वन्दन का संकल्प जगा, उसी क्षण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलज्ञान केवलदर्शन हो गया।

३. केवलज्ञान की प्राप्ति का तीसरा साधन है—धर्म जागरण। एकान्त शान्त वातावरण में बैठकर धर्म जागरण करता हुआ साधक अतिशय ज्ञान प्राप्त करता है। प्रायःकर रात्रि का समय भी इसके लिए उपयुक्त है। इस समय मस्तिष्क शान्त रहता है। विचारों की आकुलता-व्याकुलता एवं मन के भावों की धमाचौकड़ी समाप्त हो जाती है। रात को आगम ज्ञान ढंग से हो सकता है।

४. ज्ञान-प्राप्ति के साधनों में चौथा स्थान है— शुद्ध, पवित्र एवं बयालीस दोष विवर्जित निर्दोष आहार। क्योंकि शुद्ध भोजन हमारी बुद्धि को निर्मल रखता है। कहा भी है--

"जैसा अन्नजल खाइए, वैसा ही मन होय।
जैसा पानी पीजिए, वैसी ही वाणी होय।।"

आगमज्ञान का गहन ज्ञाता बनना है तो दूषित आहार का त्याग करना अनिवार्य होगा। क्योंकि वह दूषित आहार हमारी बुद्धि और मस्तिष्क को दूषित करता है, अतः शुद्ध आहार करना चाहिए।

आगम अध्ययन से जीवन को दृष्टि एवं प्रकाश मिलता है

स्वाध्याय अज्ञान एवं मिथ्यात्व रूप अन्धकार से व्याप्त जीवन को आलोकित करने के लिए जगमगाता दीपक है। जिसके दिव्य प्रकाश में हम हेय (छोड़ने योग्य), ज्ञेय(जानने योग्य) और उपादेय (ग्रहण करने योग्य) का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। स्वाध्याय को हम संजीवनी जड़ी भी कह सकते हैं। जो मरते हुए में भी जीवन का संचार करती है। स्वाध्याय से ज्ञान रूपी जीवन मिलता है। इसलिए शास्त्रकारों ने ज्ञान को प्राथमिकता देते हुए कहा है—

"पढ़मं नाणं तओ दया।"

अर्थात् पहले ज्ञान और फिर क्रिया।

स्वाध्याय के द्वारा ही मन के विकारों को जीता जा सकता है। कषायों का शमन, इन्द्रियों का दमन भी इसी से होता है अतः श्रुतवाणी में कहा गया है—

"चउकालं सज्झायं करेह।" चारों काल हमें स्वाध्याय करना चाहिए। समाचारी अध्ययन में कहा है—

"पढ़मं पोरिसिं सज्झायं, बीयं झाणं झियायइ।
तइयाए भिक्खायरियं,पुणो चउत्थी सज्झायं। (उत्तरा. 26.12)

अर्थात् प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करे, दूसरे प्रहर में पठित विषय पर चिन्तन करे, तीसरे प्रहर में भिक्षाचरी करे और फिर चौथे प्रहर में स्वाध्याय में लग जाय। परन्तु आज तो हमारी व्यवस्था बिगड़ गई है।

"पहले पहर में चाय पानी, दूसरे पहर में माल पानी।
तीजे पहर में सोडतानी, चौथे प्रहर में घूडधानी।"

हमारे पूर्वज तो चारों काल स्वाध्याय करके अपने जीवन को पावन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बनाते थे। क्योंकि वे जानते थे कि दूध में रहा हुआ घी, अरणी की लकड़ी में रही हुई आग, तिलों में रहा हुआ तेल और फूलों में रही हुई बास यानी इत्र, मंथन के बिना नहीं निकलता है। इसी प्रकार आत्मा में रहा हुआ अनन्त ज्ञान स्वाध्याय के बिना नहीं निकलता है। आगम ज्ञान तो परम रामबाण औषधि का काम करता है। जिस प्रकार शरीरगत बीमारी के लिए औषधि काम करती है, ठीक इसी प्रकार हमारी आत्मगत विषय-कषाय की बीमारी को 'स्वाध्याय' जड़-मूल से विनष्ट करता है।

प्रातः काल जगते ही शिष्य गुरु के पास पहुंचकर, दोनों हाथ जोड़कर पूछे, जैसा कि समाचारी अध्ययन में कहा

"पुच्छिज्ज पंजलिउडो, किं कायव्वं मए इहं।
इच्छं निओउयं भंते, वेयावच्चे व सज्झाए।।उत्तरा. 26.9
वेयावच्चे निउत्तेणं, कायव्वं अगिलायओ।
सज्झाए वा निउत्तेणं, सव्वदुक्खविमोक्खणे।।उत्तरा. 26.10

अर्थात् दोनों हाथ जोड़कर गुरु भगवन्त से पूछे– भगवन्! मुझे आज क्या करना चाहिए? आप अपनी इच्छा के अनुकूल हमें सेवा या स्वाध्याय में लगाइये। गुरु जिस कार्य में लगाते हैं, शिष्य का कर्त्तव्य है, वह उसी कार्य में सहर्ष लग जाय अर्थात् गुरु ने सेवा में अगर शिष्य को लगा दिया तो अग्लान भाव से सहर्ष महामुनि नन्दीषेण की तरह वैयावृत्त्य करे। स्वाध्याय के लिए प्रेरणा किए जाने पर सब दुःखों से मुक्त कराने वाले स्वाध्याय में महामुनि थेवरिया अणगार की तरह लगकर प्रसन्नता से आगम पढ़े। क्योंकि जीवन का सच्चा साथी स्वाध्याय ही है। जब सब साथी साथ छोड़कर दूर भाग जाते हैं, तब ऐसे विषम वक्त पर भी स्वाध्याय ही हमें सान्त्वना देकर दुःख से मुक्ति दिलाता है और साथ ही मानव को सत्पथ पर आरूढ़ कर सुखी बनाता है।

जिस प्रकार शरीर के लिए अन्न, जल और हवा का महत्त्व है उसी प्रकार का महत्त्व जीवन में स्वाध्याय का है। स्वाध्याय के माध्यम से हमारी बुद्धि निर्मल होती है। संशयों का समाधान होता है। अध्यवसाय यानी भावना प्रशस्त बनती है। परवादियों के द्वारा उठाई गई शंकाओं का समाधान करने की शक्ति पैदा होती है। शास्त्रों के पुनः-पुनः पठन-पाठन से आत्म-रक्षा होती है, तप-त्याग के जीवन में वृद्धि होती है। स्वाध्याय ही हमें पूर्व महापुरुषों के निकट लाने का कार्य करता है। अतः हमें निरन्तर स्वाध्याय में ही रत रहना चाहिए।

शास्त्रों में कहा है– **"सज्झायम्मि रओ सया।"**

स्वाध्याय को नन्दनवन कह सकते हैं। नन्दनवन में जैसे यत्र-तत्र-सर्वत्र अनेक किस्म के फूल खिले हुए हैं, जहां पहुंचकर मानव अपनी शरीर गत बीमारी, अशांति, दुःख, दैन्य आदि कष्टों को भूलाकर आनन्द-विभोर हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाना है। ठीक उसी प्रकार यह जीवात्मा स्वाध्याय रूपी नन्दनवन में पहुंचकर अलौकिक आनन्द की अनुभूति करता है। स्वर्ग नरक के दृश्यों को जानकर नरक के भयंकर परमाधामी देवजन्य कष्टों से तथा दश प्रकार की क्षेत्र वेदना जन्य दुःखों से बचने का और स्वर्ग एवं अपवर्ग (मोक्ष) जन्य सुखों को प्राप्त करने की ओर अपने कदम बढ़ाना है। ये सब सद्शिक्षाएँ साधक को स्वाध्याय से ही मिलती हैं। अतः हमें पराध्याय छोड़कर सदा स्वाध्याय करना चाहिए। जीवन में आमूलचूल परिवर्तन स्वाध्याय से आता है। स्वाध्याय के माध्यम से आगम में बाग लगाया जा सकता है।

अतः वीतरागों की वाणी पढ़नी चाहिए। आत्मा के लिए स्वाध्याय और शरीर के लिए भोजन अत्यावश्यक है। अपथ्य भोजन जैसे शरीर के लिए हानिकारक है, उसी प्रकार गन्दा साहित्य आत्मा के लिए महान् नुकसानकारक है। जैसा कि कहा है— "गन्दा साहित्य मत पढ़ो, पतन की ओर मत बढ़ो।"

अर्थात् अश्लील साहित्य पढ़ने से जीवन में विकृतियां बढ़ती हैं। जहर पीने से भी गन्दा साहित्य पढ़ना भयंकर है। अतः स्वाध्याय के लिए आगम-साहित्य, आगम शास्त्र एवं धार्मिक ग्रन्थों को सुनना चाहिए। मुक्ति महल में प्रवेश करने के लिए आगम स्वाध्याय एक लिफ्ट है।

जैसे दुकानों पर सजी व खड़ी पुतली, पहरे के लिए नहीं प्रदर्शन के लिए है। मिट्टी के फल खाने के लिए नहीं बल्कि रूम सजाने के लिए हैं। कागज के फूल सूंघने के लिए नहीं, बल्कि देखने के लिए हैं। इसी प्रकार आचार हीन ज्ञान आत्मदर्शन के लिए नहीं, बल्कि अहं प्रदर्शन के लिए है। अतः हमको स्वाध्याय के माध्यम से अपने आचार धर्म को शुद्ध बनाना चाहिए। चारित्र को निर्मल रखने के लिए चारित्रवान पुरुषों का जीवन सामने रखना चाहिए।

ज्ञानी भगवन्तों ने स्वाध्याय को तीसरी आंख कहा है— "शास्त्रं तृतीयलोचनम्।"

महापुरुषों के जीवन की दिव्य भव्य झांकियां देखने को आगम के पृष्ठ ही प्रेरक होते हैं। महापुरुषों के आदर्श जीवन से हम भी अपने जीवन को पावन, प्रशस्त व निर्मल बना सकते हैं। क्योंकि कवि ने कहा—

"जीवन चरित्र महापुरुषों के हमें नसीहत करते हैं।
हम भी अपना जीवन स्वच्छ रम्य कर सकते हैं।।"

महापुरुषों के आदर्श जीवन से अपना जीवन भी बदला जा सकता है। जैसे महामुनि गजसुकुमाल के प्रशस्त जीवन से हम अपना जीवन प्रशस्त बना सकते हैं। (अन्तगड तीसरा वर्ग)

कामदेव सुश्रावक जैसी दृढ़ता सीखने के लिए हमें उपासकदशांग सूत्र पढ़ना चाहिए। स्कन्धक जी, सुदर्शन जी, अर्जुनमाली एवं राजा प्रदेशी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैसे अनेक उदाहरण आज भी जैन आगम के पृष्ठों पर चमक रहे हैं व देखने, सुनने और पढ़ने को मिलते हैं, उन्हें उन आगमों से जानकर जीवन बनाने की कला सीखनी चाहिए। शास्त्रों में ऐसी अनेक प्रेरक गाथाएँ उपलब्ध है जिन्हें पढ़ सुनकर जीवन को महान् बनाया जा सकता है। उत्तराध्ययन सूत्र का १९वां मृगापुत्र अध्ययन महान् प्रेरक अध्याय है। साधक जीवन का निर्माता है, जिसकी एक एक गाथा सुनकर अनेक व्यक्तियों ने भवसागर से किनारा करने की ठानी--

"जम्मं दुक्ख जरा दुक्खं, रोगाणि मरणाणि य।
अहो दुक्खो हु संसारो, जत्थ कीसन्ति जन्तवो।।"

अर्थात् जन्म दुःख का कारण है। माँ की पेट रूपी छोटी सी कोठरी में सवा नौ माह तक बन्द रहना बहुत कठिन व कष्टदायी है। जरा भी (बुढ़ापा भी) दुःखद है। बुढापाजन्य कष्टों का सामना करना सरल नहीं, कठिन है। रोग भी दुःखप्रद और क्लेशकारक है। आश्चर्य है यह संपूर्ण संसार दुःखमय है जहां रह कर यह जीवात्मा महान् क्लेश पाता है। इन संपूर्ण दुःखों से छुटकारा प्राप्त करने का एकमात्र साधन स्वाध्याय है, जिसके माध्यम से समस्त कष्टों से छुटकारा पाया जा सकता है और निर्वाणपद की प्राप्ति की जा सकती है।

उत्तराध्ययन की चार गाथाओं के माध्यम से यह बताया गया है कि यह जीवात्मा निश्चित परलोकगामी है और परलोकगमन करने वालों के साथ भाता अत्यावश्यक है।

"अद्धाणं जो महन्तंतु, अप्पाहेओ पवज्जइ।
गच्छन्तो सो दुही होइ, छुहातण्हाहि पीडिओ।।18।।
एवं धम्मं अकाउणं, जो गच्छइ परभवं।
गच्छन्तो सो दुही होइ, वाही रोगेहिं पीडिओ।।19।।
अद्धाणं जो महन्तं तु, सप्पाहेओ पवज्जइ।
गच्छन्तो सो सुही होइ, छुहा तण्हा विवज्जिओ।।20।।
एवं धम्मं पि काउणं, जो गच्छइ परभवं।
गच्छन्तो सो सुही होइ, अप्पकम्मे अवेयणे।।21।।

अर्थात् जो व्यक्ति भाता लिए बिना ही लम्बे मार्ग पर चल देता है। वह चलते हुए भूख प्यास से पीड़ित होकर दुःखी होता है, इसी प्रकार जो व्यक्ति धर्म किए बिना परभव में जाता है; वह जाता हुआ व्याधि और रोगों से पीड़ित होकर दुःखी होता है।

जो व्यक्ति पाथेय साथ लेकर लम्बे मार्ग पर चलता है वह भूख प्यास की पीड़ा से रहित होकर सुखी होता है। इसी प्रकार जो व्यक्ति धर्म करके परभव में जाता है, वह अल्पकर्मा व वेदना से रहित होकर जाता हुआ सुखी होता है। इन सब प्रेरक प्रसंगों को सुनकर समझकर जीवन प्रशस्त बनाया जा सकता है और कर्म समूह को जड़मूल से काटा जा सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैसा कि उत्तराध्ययन सूत्र के २९ वें अध्ययन में शिष्य के प्रश्न करने पर फरमाया—

"सज्झाएणं भन्ते! जीवे किं जणयइ।
सज्झाएणं णाणावरणिज्जं कम्मं खवेइ।।"

शिष्य के प्रश्न करने पर कि भगवन्! स्वाध्याय करने से जीव को किस फल की प्राप्ति होती है? भगवान ने फरमाया ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय होता है। अज्ञान दुःख देता है। जैसा कि आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म.सा. ने कहा—

"अज्ञान से दुःख दूना होता, अज्ञानी धीरज खो देता।
मनके अज्ञान को दूर करो, स्वाध्याय करो स्वाध्याय करो।
जिनराज भजो सब दोष तजो, अब सूत्रों का स्वाध्याय करो।"

आगे भी—"करलो श्रुतवाणी का पाठ,भविकजन मन मल हरने को।
बिन स्वाध्याय ज्ञान नहीं होगा, ज्योति जगाने को।
राग द्वेष की गांठ गले नहीं, बोधि मिलाने को।।"

आगमों का अध्ययन श्रद्धापूर्वक

आगमों को श्रद्धा पूर्वक पढ़ना चाहिए, क्योंकि गीताकार श्रीकृष्ण ने कहा—

'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्।'

श्रद्धालु व्यक्ति ही सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर सकता है। श्रद्धा का मिलना अत्यन्त कठिन है। इसीलिए शास्त्रों में कहा गया है—

"सद्धा परम दुल्लहा।"

श्रद्धा परम दुर्लभ है। भूल भटक कर भी आगमों का अध्ययन शंका की दृष्टि से नहीं करना चाहिए। क्योंकि— "संशयात्मा विनश्यति।"

संशय वाली आत्माएं नष्ट प्रायः हो जाती हैं। श्रद्धापूर्वक पढ़ा गया आगम कर्म-निर्जरा का कारण बनता है।

जैन आगमों को चार अनुयोगों में बांटा गया है— १. चरणकरणानुयोग २. द्रव्यानुयोग ३. गणितानुयोग और ४. धर्मकथानुयोग। अनन्त जीवात्माओं ने इन चार अनुयोगों के माध्यम से संसार से किनारा किया है, करते हैं और भविष्य काल में भी करेंगे।

आगम की महिमा का कहां तक व्याख्यान किया जाय, मेरी जिह्वा तुच्छ है और आगम की महिमा अपार है। अन्त में

तमेव सच्चं णीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org